eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीर का समाज चिन्तन

[1]डॉ. राजेश कुमार वर्मा
[1]सहायक प्राध्यापक, टाटा महाविद्यालय सीधी, जिला –सीधी मध्यप्रदेश

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

साहित्य और समाज का मानव जीवन के साथ गहन सम्बन्ध है क्योंकि मानव के सोच–विचार, क्रियाकलाप उसकी चिन्तन शीलता आदि सभी समाज से जुड़ी होती है और समाज की सभी घटनाओ के साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है। साहित्यकार की कोई भी घटना अपनी घटना नहीं होती हैं, अपितु उस घटना का संबंध समाज से ही होता है। समाज से अलग साहित्यकार का अस्तित्व अन्धकारमय होगा। इसलिए साहित्यकार जीवन के प्रत्येक कदम पर समाज से प्रभावित होता चलता है। सन्त कबीरदास का काव्य भी समाज से निरपेक्ष नहीं है, अपितु उनकी कविता समाज सापेक्ष है। समाज में हो रहे विभिन्न परिवर्तनों ने उनके साहित्य को भी प्रभावित किया है। सन्त कबीर ने समाज की बुराइयों को अपनी आँखों से ही नहीं देखा था, अपितु सहन भी किया था। उस युग का सामाजिक वातावार दूषित था। सम्पूर्ण समाज विभिन्न वर्गों में विभक्त था तथा लगभग सभी वर्गों के लोगो का नैतिक दृष्टि से पतन हो चुका था। समाज में सभ्य कहा जाने वाला वर्ग निरन्तर स्वार्थी होता जा रहा था। सभी काजी, मौलवी व पंडित समाज को विभिन्न भ्रमों में डालकर लूट रहे थे। नारी जो समाज में उच्च स्थान की अधिकारी नही रही है, वह केवल काम वासना और भोग की वस्तु बन गयी थी। जिससे समाज मे जहाँ एक ओर पर्दा–प्रथा, अनमेल–विवाह, बहु–विवाह जैसी बुराईयाँ फैल रही थी वहीं दूसरी तरफ चोरी, बेइमानी, झूठ धोखा और हिंसात्मक प्रवृतियाँ भी जोर पकड़ रही थी। सन्त कवि कबीर दास सामाजिक बुराइयों को युगदृष्टा की परखी नजर से निहार रहे थे। उनके सामने व्यक्ति का पतन हो रहा था। धार्मिक कट्टरता के कारण हिन्दू धर्म और मुसलमानों में परस्पर वैमनस्य की भावना दृढ होती जा रही थी। हिन्दुओं को जहां एक ओर अपने धर्म में आस्था थी वही मुसलमानों को मुस्लिम धर्म में पूर्ण विश्वास और श्रद्धा थी वे दोनो अपने–अपने धर्म का प्रचार प्रसार करने के उद्धेश्य हेतु अनेकों बुराइयों से लिप्त हो गये। साधारण व्यक्ति अपने चारो ओर के इस अन्धकारमय वातावरण से दुखी व पीडित था। ऐसी भंयकर समाजिक स्थिति को देखकर समाज–सुधारक कवि कबीरदास जी निरचिंतित होकर नहीं बैठ सकते थे। उनका मन इन सभी सामाजिक विषमताओं से आहत हो उठा। जिसके विरोध में उन्होंने सामाजिक सुधार का नारा बुलन्द किया। उन्होंने समाज में व्याप्त अनेक प्रकार के आचरिक और मानसिक विकारों को निर्मूल करके आदर्श समाज और आदर्श मानव की संकल्पना की। अपनी इसी कामना की पूर्ति के लिए उन्होंने सामाजिक विसंगतियों पर बडेतीव्र और तीखे प्रहार किए। वस्तुतः सन्त कबीर की सामाजिक दृष्टि को निम्नशीर्षकों में आगे विभाजित किया गया हैं।

बीज शब्दः–साहित्य, समाज, धर्म, जाति, संस्कृति, अन्धविश्वास, मान्यता, आदर्श, साधना।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

Introduction

सन्त कबीर दास जी की भावना मूलतः विसृकति भाव की थी, परन्तु उन्होंने सामाजिक जीवन से अलग होकर साधना करने पर बल नहीं दिया, बल्कि इसकी अपेक्षा उन्होंनें लोक जीवन में ही रहकर वैराग्य की साधना को अधिक महत्वपूर्ण माना है। इसी भावना के कारण सन्त कबीर ने वैदिक काल से चली आ रही वर्ण वयवस्था में जातियों उपजातियों को सकारात्मक या नकारात्मक परोक्ष से रेखांकित किया है। इनके युग में जाति व्यवस्था विकृत रूप से फैल चुकी थी। समाज जातियों तथा उपजातियों में विभक्त हो चुका था। चतुर्वर्ण और आश्रम व्यवस्था विकिट सी हो गयी थी। लोग अपने मार्ग से विरक्त हो गए थे।कबीर दास जी छुआछूत और जाति व्यवस्था को समाज में भेदभाव फैलाने वाले तत्व के रूप मे स्वीकारते है। छुआछूत और जाति–पाति को फैलाने वाले पण्डितों और मौलवियों दोनों को उन्होंने फटकार लगाई है।इनकी दृष्टि में जन्म से कोई व्यक्ति न तो ऊँचा होता है और न ही नीचा अपितु जाति व्यवस्था की देन ईश्वर की न होकर समाज के अभिजात वर्ग द्वारा निर्मित की गई है।[1] इसी सम्बन्ध में कबीर दास कहते हैं –

जो तोहि करता बरन बिचारा, जनमत तीनि दण्ड अनुसारा।
जन्मत सुद्र मुए पुनि सूद्रा, धृतम जनेउ डारि जग मुद्रा।
जौ तुह तुरक तुरकिनी जाया, पेटे काहे न सुनति न आया।

सन्त कबीर ने हिन्दू और मुसलमानों द्वारा समाज में फैलाई जाति व्यवस्था का ही विरोध नहीं किया है अपितु समाज में व्याप्त अनेक धर्मो –शैव, शाक्त और वैष्णव के भेद को भी रेखाकित किया हैं।

साषत संगु न कीजिए, दूराहि जइसे भागु।
बासन कारो परसिये, तऊ कछु लागै दागु।।

अतः स्पष्ट है कि सन्त कबीरदास जी ने समाज निर्मित जाति को नकारते हुए ईश्वरीय जाति को स्वीकार किया है।इनकी साधना का प्रधान लक्ष्य था कि मनुष्य इन जाति बन्धनो ंसे छुटकारा पाकर ईश्वरत्व को स्वीकार करे और समाज में फैली विभिन्न जातियों को नकार कर के प्रेम का मार्ग अपनाएं एवं एक दूसरे के सहयोग से जीवन यापन करे।[2]

सामाजिक व्यवस्था और विश्वास–प्रत्येक समाज की अपनी संस्कृति होती हैं, जो अपने ही रीतियों एवं विश्वासों पर आधारित होती है। लोकजीवन में लोक विश्वासों और लोक मान्यताओं की विशेष महत्ता होती हैं। जिस जाति का सांस्कृतिक आधार जितना पुराना होगा, उसमे प्रचलित कुकर्मो के लिए नरक की प्राप्ति होती है। संसार में वे मनुष्य ही इस नरके से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं जो ईश्वर की आराधना करते है, उसके नाम का स्मरण करते हैं:–

कहै कबीर दोउ गये नरक महँ,
जिन हरदम राम न जाना।।

©IJARMS JOURNAL, 2024

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

मूर्तिपूजा – सन्त कबीर दास ने अपने युग में व्याप्त मूर्तिपूजा का विरोध किया हैं, क्योंकि ईश्वर की प्राप्ति मन से की जाती हैं न कि मूर्तियों की पूजा करने से। मूर्तियों पर उपहास करते हुए कबीर ने कहा हैं –'पाथर पूजे हरि मिलै, तौ मै। पुजुँ पहार।' उन्होंने उन लोगों का भी विरोध किया है जो मूर्ति पूजा मे ही अपना ध्यान रमाये बैठे रहते है और सत्कर्म से मुहँ मोड़ चुकें है।
अन्धविश्वास –भारतीय समाज मे सामान्यतः लोगों की मान्यता रही है कि गेरूए वस्त्र पहन कर, गले में माला धारण करके, तीर्थ स्थानों पर स्नान करके, जप–तप से ईश्वर को प्राप्त किया जाता है, परन्तु सन्त कबीर दास ने गेरूए वस्त्र माला तीर्थ स्थान तिलक, जप–तप आदि को मिथ्या माना है।[3] उन्होंने वस्त्रों के सन्र्दभ में कहा है कि–

मन न रंगाये, रंगायें जोगी कपड़ा।
आसन मारि मन्दिर में बैठे, नाम छाँड़ि पूजन लागे पत्थर।[4]

इसप्रकार हिन्दू समाज के जिस जिस क्षेत्रमे आडंम्बर एवं अन्धविश्वास था कबीर ने उनका विरोध किया है।

नारी विषयक चिन्तन–

सन्त कबीर की कविताओंमें नारी विषयक चिन्तन का सर्वथा अभाव दिखाई पड़ता हैं, क्योंकि उनकी कविताओं का लक्ष्य ईश्वर महिमा का गायन करना था न कि नारी विषयक चिन्तन प्रस्तुत करना। फिर भी उनकी कविताओं मे नारी के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। सन्त कबीर ने नारी के दो रूपों की अवतारणा की हैं – एक तो कामिनी रूप की और दूसरे सती रूप की। नारी के कामिनी रूप में कबीर दास ने नारी के निन्दनीय रूप को चित्रित किया है, क्योंकि उनकी दृष्टि मे नारी नरक का द्वार है और ईश्वर प्राप्ति में बाधक भी। नारी के संसर्ग से साधकको ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती है।[5]

नारी की झांई पड़त, अन्धा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी मौन गति, जो नित नारी के संग।।

सन्त कबीर दास जहाँ एक ओर कामिनी नारी की कठोरता के साथ भर्त्सना करते हैं, उसे त्याज्य मानते हैं उसके साहचर्य से दूरी चाहते हैं, वहीं दूसरी तरफ पतिव्रता नारी को वे बड़ा मान सम्मान प्रदान कर गौरवान्वित करते है। पतिव्रता नारी न केवल अपने पति के ही प्रति अपनी भावनाओं को उद्वेलित करती है। अपितु वह माता बनकर समाज का निर्माण भी करती है। वह अपने सहकर्मों से अपने समाज को प्ररेणा प्रदान करती हैं। इतना ही नही, वह नाना गुणों से अन्वित होती है। इसलिए नारी के बाह्य रूप की अपेक्षा कबीर ने उसके आन्तरिक पक्ष निर्मलता, कोमलता, एवं शुद्वता की ओर उन्होंने ध्यान दिया है। बाह्य गुणोंके स्थान पर आन्तरिक गुणों का विशिष्ट महत्व स्वीकार किया है। इसलिए सन्त कबीर दास जी कहते हैं–

पतिबरता मैली भली, काली कुचित कुरूप।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

अतः कबीर ने अपने काव्य के माध्यम से जहाँ कामिनी नारी की भर्त्सना की है, वहीं दूसरी तरफ पतिव्रता नारी को पूज्य माना हैं और नारी समाज का आह्वान किया हैं कि नारी पतिव्रता का धर्म ग्रहण करे।

सामाजिक नैतिकता की प्रतिष्ठाः–

सन्त कबीरदास न जहाँ समाज में व्याप्त पाखण्डों और अन्धविश्वासों का खण्डन किया हैं वहीं समाज सुधार के लिए उन्होंने नैतिक आदर्शो का भी प्रतिपादन किया है। उन्होंने मानव जीवन को परिष्कार हेतु काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार आदि को निन्दनीय मानकर उसे त्यागने का सन्देश दिया है, वहीं सत्य, दया, प्रेम परोपकार, संत्संगति एवं अहिंसा आदि का भी महत्व प्रतिपादित किया हो। इन नैतिक आदर्शो को ग्रहण करके ही कोई व्यक्ति सच्चे अर्थो में सामाजिक प्राणी कहला सकता है, उन्होंने नीति के निम्न तत्वों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया हैं सन्त कवि कबीरदास ने सत्य से बड़ा कोई धर्म ही नहीं माना है। सत्य के आधार पर ही साधारण मनुष्य भी उच्चता को ग्रहण कर सकता है। इसके विपरित यदि कोई व्यक्ति झूठ का सहारा लेता है तो उसका शरीर अनेक बुराईयों से युक्त हो जाता है। अतः जो मनुष्य झूठ बोलता है वह पापी है और पापी व्यक्ति का संसार में कोई हितैषी नहीं होता है।[6]

सांच बराबर तप नहीं, झूठ बरोबर पाप।
जाकै हृदय साँच हैं, ताके हृदय आप।।

स्पष्ट है कि ईश्वर भी उसी व्यक्ति की सहायता करता है जो सत्यता के मार्ग पर चलता है। सन्त कबीर का विश्वास है कि जो मनुष्य झूठ बोलता है, वह लाख प्रयत्न करने पर भी अपना भला नहीं कर सकता है। अतः मनुष्य सत्यता जैसे गुणों को ग्रहण करने पर भी अपना भला नही कर सकता। उसके सुख, समृद्धि का आधार तो केवल मात्रा सत्यता ही हैं।[7]

इस प्रकार कबीर की सद्समाज प्रियता उनकी विचारधारा में पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित दिखलाई पड़ती है। उन्होंने परम्परागत अन्धविश्वासों, प्रथाओ और संस्थाओं का मूलोच्छेदन करके धर्म दर्शन और समाज सभी क्षेत्रों में बुद्धिवादी साम्यवाद प्रतिष्ठित किया था। अपने लक्ष्य की पूर्ति उन्होंने इसमें कोई भी संन्देह नहीं, बडी कटुता के साथ की है। यह कटुता कहीं कही अपने अतिरूप में दिखलाई पड़ती है। इनको देखकर ऐसा मालूम होता है कि कबीर किसी प्रकार की पक्षपात पूर्ण दुर्भावनाओं से प्रेरित थे, किन्तु हमारी समझ में इस की कट आलोचनाओं के मूल में उनकी अक्खड़ प्रकृति बहुत थी।[8]

निष्कर्षः–

कह सकते हैं कि कबीरकालीन विकृतियों, असंगतियों रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों से आज भी हमारा समाज मुक्त नहीं हो पाया है। जात–पांत छुआछूत सांप्रदायिकता अशिक्षा गरीबी जैसी विषमताएँ जड़ जमाये बैठी हैं। आर्थिक स्वार्थ दंभ नैतिक पतन ने व्यक्ति को संवेदनहीन और स्वार्थी बना दिया है। शोषण उत्पीड़न झूठ फरेब आज और भयानक रूप में देखा जा सकता है। अतः कबीर के समता स्वतंत्रता और भ्रातृत्व गढ़ने के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। जिन मानवीय मूल्यों की स्थापना हेतु वे जीवनभर संघर्षरत रहें उस संघर्ष की लौ को फिर से जीवित रखने की आवश्यकता

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

आ पड़ी है। प्रेम, मानवता, सद्भाव, सौहार्द और नैतिकता की बहाली के लिए कबीर के विचारों का पुनः अनुसरण समय की मांग है। "वे हर जेल के खिलाफ आजादी हैं हर सत्ता के खिलाफ सृजनधर्मी विपक्ष हैं। कठमुल्लापन और पुरोहितवाद कट्टरपंथ के खिलाफ अब कबीर के विपक्ष की जरूरत है।

संदर्भ सूची :–

1. विजयेन्द्र स्नातक, डॉ रमेशचन्द्र मिश्र–कबीर वचनामृत, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, छठा संस्करण, 2005, पृ. 153
2. सुदर्शन चोपड़ा–कबीर परिचय तथा रचनाएं, हिन्दी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली,नवीन संस्करण,2003, पृ. 31
3. रवीद्र कुमार सिंह–संत–काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2005, पृ. 16
4. कबीर की साखियां
5. रवीद्र कुमार सिंह –संत–काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2005, पृ. 86
6. सुदर्शन चोपड़ा–कबीर परिचय तथा रचनाएं, हिन्दी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली,नवीन संस्करण,2003, पृ. 12
7. रवीद्र कुमार सिंह–संत–काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2005, पृ. 88
8. सुदर्शन चोपड़ा–कबीर परिचय तथा रचनाएं, हिन्दी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली,नवीन संस्करण, 2003, पृ. 38